यातायात के निरंतर चलते रहने का घोषणापत्र
A Manifesto for Sustainable Transport

सुधीर चेला राजन
Sudhir Chella Rajan
May 24, 2010

एक काली छाया भारत पर मंडरा रही है; यह काली छाया है सफ़ाई ,सुरक्षा और सबके लिए किफ़ायती दाम पर वस्तुएँ और सेवाएँ सुलभ कराने की. नीति-निर्माता बड़ी उलझन में हैं. वे नहीं समझ पा रहे हैं कि शहरी विकास के लिए ऑटोमोबाइल का कौन-सा मॉडल आपनाया जाए. ऑटोमोबाइल को प्राथमिकता देने वाले बीसवीं सदी का उत्तरी अमरीका का मॉडल या उत्तरी योरोप के समकालीन शहरों का मॉडल, जहाँ कार चालकों के मुकाबले पैदल चलने वालों, साइकिल चलाने वालों या सार्वजनिक परिवहन का उपयोग करने वालों को प्राथमिकता दी जाती है. इसमें पहला मॉडल इस लोकप्रिय विचारधारा के बहुत नज़दीक है कि आधुनिक मानव की प्रगति कार मालिकों के बढ़ते स्तर पर निर्भर करती है, लेकिन यह विचारधारा हमेशा नहीं चल सकती. दूसरी विचारधारा अजीब लगती है, क्योंकि वह मध्यम वर्ग की आकांक्षाओं के अनुरूप नहीं है, लेकिन यदि आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरण संबंधी लाभों को देखा जाए तो यह अधिक बेहतर मालूम पड़ती है.

मोटर वाहन निर्माता, पैट्रोल और डीज़ल के पूर्तिकर्ता, सड़क ठेकेदार, परंपरागत यातायात के इंजीनियर, शहरी योजनाकार और शहरी भद्रलोक जैसे स्थापित हितधारक मोटरीकरण, उपनगरीकरण और राजमार्ग विकास के साथ-साथ महँगे मैट्रो सिस्टम को अतिरिक्त साधन के रूप में पसंद करते हैं. फिर भी सड़क पर गति पहले ही बहुत बढ़ चुकी है और यातायात का परिप्रेक्ष्य गतिशीलता से आगे बढ़कर वस्तुओं और सेवाओं की पहुँच तक आ गया है. इसका अर्थ यह है कि हमें मिले-जुले सड़क-उपयोगकर्ताओं को सामने रखकर यातायात की व्यवस्था करनी होगी, जिसमें यातायात के अलग-अलग साधनों और किफ़ायत के मद्देनज़र पैदल चलने वालों, साइकिल चलाने वालों और सार्वजनिक यातायात विशेषकर बसों के लिए मूलभूत ढाँचे की अतिरिक्त सुविधाएँ जुटानी होंगी. इनमें से कौन-सा मॉडल स्वीकार किया जाएगा यह देखना अभी बाकी है. लेकिन जलवायु परिवर्तन और तेल सुरक्षा जैसे हाल ही में सामने आए कुछ ऐसे विचार हैं जिनसे व्यक्तिगत गतिशीलता के खिलाफ़ माहौल बन सकता है. संक्षेप में मोटरीकरण के लिए वचनबद्धता पर रोक लगाने के लिए दबाव बहुत बढ़ रहा है.

यातायात के साधनों की सुलभता में अनायास तेज़ी आने का मुख्य कारण यही है कि अधिकांश लोग सिर्फ़ यही चाहते हैं कि उन्हें अपने काम पर जाने, स्कूल, अस्पताल, किराने की दुकान या मनोरंजन स्थल तक पहुँचने में कोई दिक्कत न हो और इसके लिए अपना वाहन अनेक साधनों में से सिर्फ़ एक साधन है भारी वायु प्रदूषण, भीड़-भाड़ वाली सड़कें और घातक व असह्य दुर्घटनाओं के बढ़ने से यह हैरानी की बात नहीं होगी कि आम आदमी के लिए बस यही महत्वपूर्ण रह जाए कि अपना काम, आवश्यक वस्तुएँ और सेवाएँ उसे अपने आसपास ही मिल जाएँ. मध्यम वर्ग में भी अब यह जागरूकता बढ़ने लगी है कि भारतीय परिप्रेक्ष्य में कार का व्यापक उपयोग सुविधाजनक नहीं है. कुछ ही दशकों या सदियों पहले बने हमारे शहर कुछ इस तरह से बने हैं कि दुकान, घर और अनेक कार्यस्थल भी सिर्फ़ इतनी दूरी पर हों कि हम पैदल वहाँ पहुँच सकें. लेकिन अब शहरी स्थलों पर कारों के लिए सड़कों के विस्तार के कारण पैदल चलना भी मुश्किल होता जा रहा

है. मुंबई जैसे भारतीय शहरों में पैदल चलने वालों के रास्ते या पगडंडियाँ पाँच किलोमीटर से अधिक लंबी नहीं होतीं. पैदल या साइकिल पर चलने के लिए ये रास्ते सबसे अधिक सुरक्षित हुआ करते थे, लेकिन अब टक्कर लगने और तेज़ वाहनों के जोखिम के कारण इन पर चलना भी खतरे से खाली नहीं है. शहरी लोग साइकिलों के लिए सड़क के किनारे बने संकरे रास्ते से भी नहीं चल पाते क्योंकि इन जगहों पर कारों के लिए अधिक स्थान देने के लिए अनेक गतिविधियाँ चलती रहती हैं, इसलिए अब वे प्रदूषण वाली, खतरनाक और क्षमता से अधिक यात्रियों से ठसाठस भरी बसों से यात्रा करने के लिए विवश हो जाते हैं.

इन चुनौतियों का प्रभाव कई रूपों में और समाज के अनेक वर्गों पर पड़ा है. यह इसी बात से स्पष्ट है कि इसके विरोध में दिल्ली के गरीब रिक्शावाले सड़कों पर अपनी रोजी-रोटी कमाने के अधिकार के लिए और सलमान खान जैसे अभिनेता और सितारे मुंबई में "कार मुक्त" दिनों को प्रोत्साहित करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं. लगता है कि सार्वजनिक यातायात के लिए जगह को फिर से पाने के लिए अहमदाबाद, दिल्ली, पुणे और अन्य अनेक शहरों में बस रैपिड ट्रांसपोर्ट के परीक्षण के लिए कम से कम लागत पर हर संभव प्रयास किए जा रहे हैं. इसका अंदाज़ा चेन्नई और पुणे जैसे शहरों के महापौरों और प्रशासकों द्वारा साइकिल चलाने की प्रथा को फिर शुरू करने के लिए नए सिरे से दिलचस्पी लेने में देखा जा सकता है. सारे देश में शहरी इलाकों में ज़मीन के उपयोग,पानी की प्राप्ति,सफ़ाई और आवास को लेकर विरोध हो रहा है. इससे यह भी स्पष्ट है कि सड़क-निर्माण और झोपड़पट्टियों से लोगों को खदेड़ने की शहरी नीतियाँ भद्रलोक के पक्ष में हैं. यही कारण है कि वर्तमान सुविधाओं तक आम लोगों की पहुँच मुश्किल होती जा रही है और सरकार की गलत प्राथमिकताओं के कारण उनमें सुधार के नाम पर संसाधनों को कहीं और ले जाया जा रहा है.

दूसरी ओर कुछ ऐसे प्रभावशाली लोग भी हैं जो इस विचार का निरंतर समर्थन करते हैं कि व्यक्तिगत कारों का उपयोग और उससे संबद्ध "स्वतःचालन" की आज़ादी हर नागरिक का मौलिक अधिकार है और इस अधिकार में केवल गरीबी ही बाधक बन सकती है. उन्हें यह सुनना भी अच्छा नहीं लगता कि योरोपियन लोग, विशेषकर डच और डेनिश लोग भारतीय शहरों की तुलना में अधिक तूफ़ानी वातावरण के बावजूद कार को छोड़कर साइकिल चलाने, पैदल चलने या सार्वजनिक वाहनों का प्रयोग करते हुए अपनी आज़ादी का उपयोग करना बेहतर समझते हैं. सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात तो यह है और जो इस संदर्भ में अनकही रह गई है कि निजी वाहनों का उपयोग आबादी का बहुत कम हिस्सा ही करता है और वे सड़क को घेरने की पूरी लागत भी अदा नहीं करते हैं, वायु प्रदूषण फैलाते हैं, आयातित तेल जलाकर मूल्यवान् विदेशी मुद्रा को बर्बाद करते हैं, दुर्घटनाएँ कराते हैं और पर्यावरण-प्रणाली अर्थात् ईकोसिस्टम को नुक्सान पहुँचाते हैं. गरीब आदमी ही शहरी स्थान का निरंतर उपयोग करता है. वह पैदल चलकर, साइकिल चलाकर या लंबी दूरी तक सफ़र करने के लिए सार्वजनिक वाहन का उपयोग करते हुए शहरी स्थान का भरपूर उपयोग करता है और इस प्रकार हर अवसर पर स्थानीय रूप में उपलब्ध वस्तुओं और सेवाओं का उपभोग भी करता है.

वास्तव में यह भी लगातार साफ़ होता जा रहा है कि यातायात और उसकी पहुँच की चुनौतियाँ केवल गरीबों को ही नहीं अधिकांश नागरिकों और नीति-निर्माताओं को भी प्रभावित करती हैं. वस्तुतः यातायात की पहुँच के लिए जो समाधान सुझाए गए हैं उनसे अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी पैदा हो सकती हैं, जैसे, दमा और अन्य साँस की बीमारियाँ, बचपन का मोटापा, जलवायु परिवर्तन, सामुदायिक बीमारियाँ, मधुमेह आदि. इसके अलावा स्थानीय और राज्य सरकार को वित्तीय घाटा हो सकता है, कम सुनाई देने की बीमारी हो सकती है, दुर्घटना

के कारण जान जा सकती है और अंग-भंग हो सकता है, पैट्रोलियम पर निर्भरता बढ़ सकती है, ज़मीन के दाम बढ़ सकते हैं, यातायात की लागत बढ़ सकती है, वाहन चालकों के गुस्से से और पसरकर बैठने से भी यातायत प्रभावित हो सकता है. उदाहरण के लिए आई.आई.टी,दिल्ली की गीतम तिवारी और लंदन स्कूल ऑफ़ इकॉनॉमिक्स के स्टीफ़न वुलकॉक द्वारा लैन्सेट में संयुक्त रूप में किए गए हाल ही के अध्ययन में सुझाया गया है कि यदि दिल्ली में पैदल चलने वालों के लिए थोड़ा-सा भी सुधार कर दिया जाए और साइकिल चालकों के लिए अलग मार्ग बना दिया जाए तो दिल्ली में कार्बन उत्सर्जन में भारी कमी आ सकती है और साफ़ हवा के कारण स्वास्थ्य में सुधार हो सकता है और मोटर वाहनों में प्रौद्योगिकीय सुधार लाने से दुर्घटनाओं में जो कमी आ सकती है,उससे कहीं अधिक कमी इन उपायों से आ सकती है. इसीप्रकार निष्क्रिय जीवन शैली अपनाने के कारण शहरों में मोटापा और मधुमेह की बीमारियाँ बढ़ रही हैं. यदि बच्चों और वयस्कों को पैदल चलने या साइकिल से आने-जाने के लिए प्रोत्साहित किया जाए तो शहरी इलाके और अधिक दोस्ताना हो सकते हैं और इस प्रकार की बीमारियों पर भी रोक लग सकती है.

आज सारी दुनिया में घने, मिले-जुले उपयोग वाले पैदल चलने लायक शहरी स्थानों को सर्वाधिक रचनात्मक और गतिशील पर्यावरण के रूप में मान्यता दी गई है. इन स्थानों का मॉल जैसे मनोरंजन स्थलों के रूप में पुनर्निर्माण बहुत चमक-धमक से भरा और भड़कीला माना गया है, लेकिन वास्तविक स्थलों का यह बहुत घटिया स्थानापन्न है. क्युरितिबा से कॉपनहेगन और इस्तांबुल तक ज़िंदा सड़कों का मतलब और बनारस व तंजावुर जैसे पुराने भारतीय शहरों की अवधारणा बिल्कुल ही अलग है. वस्तुतः स्मार्ट शहरी डिज़ाइन का नया मंत्र भी अब यही है. नीति निर्माता कदाचित् विकासकर्ताओं के उस अँधियारे पक्ष पर भी गौर करना चाहेंगे जिसके मद्देनज़र पॉश इलाकों में बंद चारदीवारों में रहने वाले लोगों का अलग ही समुदाय बनने लगा है और उन्हें विशिष्ट व्यावसायिक और औद्योगिक केंद्रों तक पहुँचाने के लिए फ़्लाईओवरों का निर्माण किया जाता है ताकि ये संपन्न व्यक्ति शहर के पुराने केंद्रों और उनमें रहने वाले गरीब लोगों के कभी संपर्क में न आ सकें जो भावी दृश्य हमारे सामने आता है वह तो ब्लेड रनर या डिस्ट्रिक्ट 9 जैसी विकृत युटोपियन फ़िल्मों में चित्रित दृश्यों से भी अधिक भयावह है. ऐसा लगता है कि शहरी क्षेत्रों में रंगभेद की तरह पहले से बने इन इलाकों का और भी विस्तार होता जा रहा है. इनमें वातानुकूलित वाहनों में बैठकर समाज का एक छोटा-सा वर्ग मुक्त भाव से घूमता-फिरता है और उस वर्ग से पूरी तरह कटा रहता है जो कम मज़दूरी पर काम करते हुए एक बिल्कुल समानांतर दुनिया में रहते हैं और विशिष्ट वर्ग के लोगों के लिए सेवाएँ प्रदान करते हैं ये लोग लंबी दूरियों तक बहुत ही मुश्किल से व्यक्तिगत जोखिम उठाकर आने-जाने के लिए विवश रहते हैं. विकल्प बहुत स्पष्ट हैः यदि सामुदायिक जीवन की निरंतरता और संरक्षण महत्वपूर्ण है तो सहज आवागमन के लिए उठने वाली लोगों की आवाज़ों पर ध्यान देना होगा.

सुधीर चेला राजन मानविकी और समाज विज्ञान के प्रोफ़ेसर हैं और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मद्रास में निरंतरता के इंडो-जर्मन केंद्र में समन्वयक हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा),रेल मंत्रालय, भारत सरकार

<malhotravk@hotmail.com>